चाणक्य और चन्द्रगुप्त

सन्तराम वत्स्य

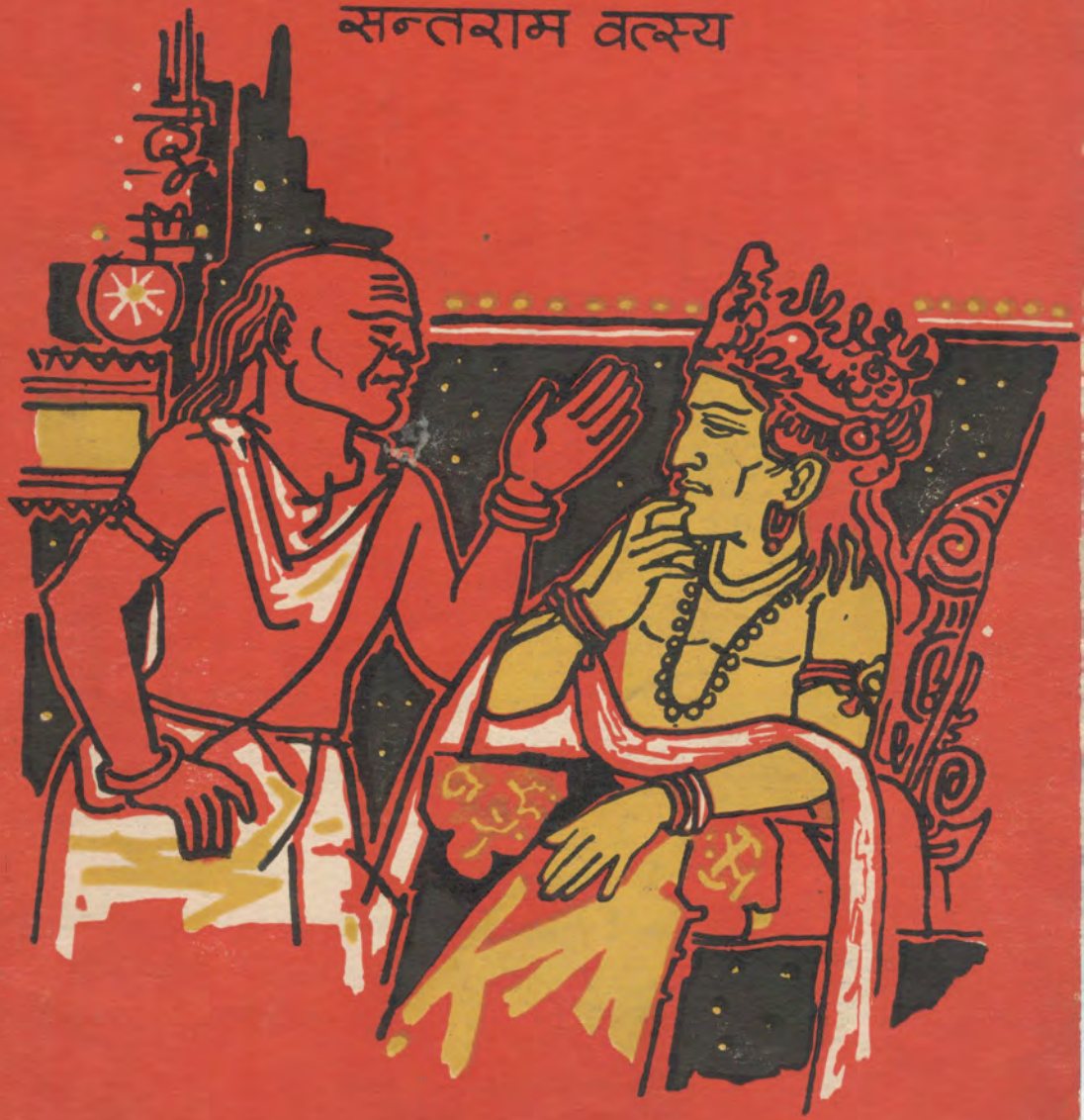

चाणक्य और चन्द्रगुप्त

सन्तराम वत्स्य

निधि प्रकाशन, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6

प्रमुख पात्र

1. चाणक्य	:	विष्णुगुप्त ब्राह्मण, चन्द्रगुप्त का मुख्यमंत्री
2. चन्द्रगुप्त	:	पाटलिपुत्र का नया राजा
3. शकटदास	:	महापद्मनन्द का मंत्री, फिर चाणक्य का जासूस
4. भागुरायण	:	चाणक्य का जासूस
5. जीवसिद्धि	:	चाणक्य का जासूस
6. सिद्धार्थक	:	चाणक्य का जासूस
7. राक्षस	:	महापद्मनन्द का मुख्यमंत्री, अन्त में चन्द्रगुप्त का मुख्यमंत्री
8. महापद्मनन्द	:	पाटलिपुत्र का पहला राजा
9. सर्वार्थसिद्धि	:	महापद्मनन्द का भाई
10. विचक्षणा	:	महापद्मनंद की दासी
11. मलयकेतु	:	पर्वतक का पुत्र
12. वैरोधक	:	पर्वतक का भाई
13. दारुवर्मा	:	राक्षस का जासूस
14. पर्वतक	:	महापद्मनन्द का सम्बन्धी एक पहाड़ी राजा

मूल्य : पांच रुपये

प्रकाशक : निधि प्रकाशन
1590, मदरसा रोड
कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006

क्रमांक : 17

प्रथम संस्करण : 1980

© : सन्तराम वत्स्य

मुद्रक : सीमा प्रिंटिंग प्रेस
मोहन पार्क, शाहदरा, दिल्ली-32

CHANAKYA AUR CHANDRA GUPTA
(Novel) by Sant Ram Vatsya 5.00

चाणक्य और चन्द्रगुप्त

यह कहानी बड़ी पुरानी है—कोई तेईस सौ वर्ष पुरानी। पाटलिपुत्र (पटना) में महापद्मनन्द राजा राज्य करता था। महापद्मनन्द की रानी का नाम था रत्नावली। उसके आठ बेटे थे। महापद्मनन्द की एक बड़ी सुन्दर दासी थी मुरा। मुरा का एक बेटा था चन्द्रगुप्त।

महापद्मनन्द का बड़ा दबदबा था। उसकी सेना में रथ, हाथी, घोड़े और पैदल सैनिक खूब थे। छोटे-मोटे राजा तो उसके नाम से डरते थे। जब सिकन्दर ने भारत पर चढ़ाई की थी तो महापद्मनन्द ने डटकर उसका सामना किया था। उस युग में भारत में महापद्मनन्द सबसे शक्तिशाली राजा था।

महापद्मनन्द बड़ा गुसैल था। जिसपर बिगड़ जाता, उसे ही उजाड़ डालता। उसके दो मंत्री थे—मुख्यमंत्री शकटार और राक्षस। दोनों ही मंत्री बड़े विद्वान् और राजनीति के दांव-पेच समझने वाले थे। राजा भी उनका खूब मान करता था और उनकी सलाह से ही सारे काम निपटाता था। मुख्यमंत्री शकटार राजा का मुंह-लगा था, इसलिए उसका भी खूब दबदबा था। शकटार का स्वभाव गर्म था। राक्षस जरा गंभीर स्वभाव का था। वह कभी कोई काम उतावली में नहीं करता था। खूब सोच-विचार कर ही वह कोई कदम उठाता था। शकटार बड़ा और पुराना मंत्री था, इसलिए वह कभी-कभी राजा के सामने भी अपनी बात पर अड़ जाता। दोनों ही गर्म—राजा भी और मुख्यमंत्री भी, तो निभे कैसे ?

एक बार किसी बात को लेकर राजा और मुख्यमंत्री में ठन गई। राजा तो राजा ही ठहरा ! मंत्री राजा से बड़ा तो होता नहीं ! राजा का नौकर ही होता है। राजा महापद्मनन्द शकटार पर ऐसा बिगड़ा कि उसे कैद करके एक तंग कोठरी में बन्द कर दिया। जब इतने पर भी उसका गुस्सा ठंडा नहीं हुआ तो उसके परिवार को भी उसके साथ ही बन्द कर दिया।

राजा ने आज्ञा दी कि इन्हें एक दिन में खाने के लिए दो सेर सत्तू दिए जाएं। भला इस बड़े परिवार का गुजारा दो सेर सत्तू से कैसे होता ? मंत्री के परिवार को सत्तू-पानी पर से दिन काटने पड़े। मरता क्या न करता !

शकटार ने राजा की बहुत सेवा की थी, पर जरा-सी बात पर बिगड़कर राजा ने उसे इतना बड़ा दण्ड दे डाला था और ऊपर से पेट भरकर खाने को भी नहीं। शकटार अन्दर-ही-अन्दर राजा के बर्ताव से जल रहा था, पर करता क्या ! वह किसी तरह राजा से बदला लेना चाहता था—ऐसा बदला कि राजा की भी अक्ल ठिकाने आ जाए। उसे पता लग जाए कि मंत्री से बिगाड़ने का क्या परिणाम होता है।

प्रतिदिन जब सत्तू आता तो शकटार अपनी पत्नी और पुत्रों से कहता, "जो नन्द-वंश को जड़ से काटने में समर्थ हो, वही ये सत्तू खाए।"

उनमें से कोई भी सत्तू न खाता। यों कुछ दिनों में वे भूखे रहकर मर-खप गए। शकटार नन्द-वंश को उजाड़ने के लिए जीता रहा। परिवार के सारे लोगों के मर जाने से शकटार का दुःख दूना हो गया। राजा से बदला लेने की बात वह घड़ी-भर को भी न भूलता। बस, एक ही बात थी—बदला लेने की चाह, जिसके कारण वह मरना नहीं चाहता था। वह रात-दिन नन्द-वंश को उजाड़ने के उपाय सोचता रहता, पर इस काल-कोठरी में बन्द वह करे तो क्या करे !

एक दिन राजा महापद्मनन्द हाथ-मुंह धोकर हँसते-हँसते रनिवास में चला आ रहा था। राजा को हँसते देखकर, राजा की मुंह-लगी दासी विचक्षणा भी हँस पड़ी। राजा उसकी ढिठाई पर चिढ़ गया। राजा ने पूछा, "बता, तू क्यों हँसी ?"

विचक्षणा दासी बोली, "आपको हँसते देखकर मुझे भी हँसी आ गई।"

इस उत्तर से राजा का गुस्सा और बढ़ गया; वह बोला, "अच्छा, यह बता कि मैं क्यों हँसा ?"

बेचारी विचक्षणा इस बात का क्या उत्तर देती !

राजा ने कहा, "अगर उत्तर नहीं देगी तो तुझे प्राणदण्ड दिया जाएगा।"

विचक्षणा को हँसी बहुत महंगी पड़ी। उसे कोई उत्तर नहीं सूझा तो बोली, "मुझे एक महीने का समय दीजिए। मैं सोचकर बताऊंगी।"

राजा ने कहा, "ठीक है। अगर एक महीने तक भी मेरे हँसने का कारण नहीं बताया तो जान से हाथ धोने पड़ेंगे।"

विचक्षणा मारे चिन्ता के सूखने लगी। अन्त में वह सोच-विचार कर अच्छी-अच्छी खाने-पीने की चीजें लेकर कैदखाने में बन्द शकटार के पास पहुंची। उसने रो-रोकर अपनी बात शकटार को बताई और बचने का उपाय पूछा।

शकटार ने सोचकर बताया कि राजा ने जब कुल्ला किया तो पानी के छींटे बिखर गए। राजा ने सोचा कि पानी के छींटों-जैसे बड़ के छोटे-से बीज से कितना बड़ा वृक्ष बन जाता है। प्रकृति की इस विचित्रता को सोचकर ही राजा को हँसी आई थी।

विचक्षणा ने कहा, "मंत्री जी, अगर आपके बताए इस उत्तर से मेरी जान बच गई तो मैं जीवनभर आपके उपकार को नहीं भूलूंगी और आपको कैद से छुड़ाने के लिए पूरा यत्न करूंगी।"

महीना पूरा होने को आया तो राजा महापद्मनन्द ने दासी से फिर पूछा।

जैसा शकटार ने बताया था, उसने वैसा ही बता दिया।

राजा को ठीक-ठीक उत्तर मिल गया था। किन्तु वह जानता था कि उत्तर इसने किसीसे पूछा है; अपनी समझ से नहीं दिया है।

राजा ने दासी से कहा, "तू सच-सच बता कि यह उत्तर तुमने किससे पूछा है।"

दासी ने सच-सच बता दिया कि कैद में बन्द मंत्री शकटार से पूछा है।

राजा ने शकटार की समझदारी की प्रशंसा की और सोचा कि ऐसे समझदार मंत्री को कैद में बन्द रखना ठीक नहीं। उसने शकटार को कैद से छोड़ने की आज्ञा दी और फिर उसे मंत्री बना दिया। पर इस बार वह छोटा मंत्री बना। मुख्यमंत्री राक्षस बना।

शकटार मंत्री बन तो गया, पर उसके मन में बदले की आग पहले ही की तरह सुलगती रही। वह किसी अच्छे मौके की खोज में चुपचाप अपने दिन काटता रहा।

मंत्री शकटार एक दिन घोड़े पर सवार होकर नगर के बाहर कहीं जा रहा था कि रास्ते में एक काला-कलूटा ब्राह्मण उसे कुश उखाड़ता और उनकी जड़ों में छाछ डालता दिखाई दिया। शकटार घोड़ा रोककर यह सब देखता रहा, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। तब उसने घोड़े से उतरकर ब्राह्मण देवता को नमस्कार किया और पूछा, "महाराज ! यह आप क्या कर रहे हैं ?"

ब्राह्मण बोला, "मेरा नाम चाणक्य है। मैं इस मार्ग से जा रहा था कि मेरे पैर में कुश चुभ गए। इसलिए मैं जब तक इन कुशाओं को जड़-मूल से नष्ट नहीं कर लूंगा तब तक चैन नहीं पाऊंगा। इनको जड़ से उखाड़कर भी मैं छाछ इसलिए डाल रहा हूं कि कोई जड़ बच भी जाए तो दोबारा उग न सके।"

शकटार ने सोचा—'अगर किसी तरह यह क्रोधी ब्राह्मण देवता राजा का शत्रु बन जाए तो मेरा मनचाहा काम पूरा हो सकता है।'

उसने चाणक्य से कहा, "ब्राह्मण देवता ! आप पाटलिपुत्र नगर में पधारिए।

कुश उखाड़कर जड़ों में छाछ डालते हुए ब्राह्मण चाणक्य

वहां एक पाठशाला खोलिए और छात्रों को विद्या पढ़ाइए। यहां से कुश उखाड़ने का काम मैं अपने कर्मचारियों से करवा दूंगा। आप ब्राह्मण का वास्तविक कर्तव्य 'विद्या-पढ़ाने' का ही कार्य कीजिए।"

चाणक्य ने शकटार की बात मान ली और पाटलिपुत्र चला गया। वहां शकटार के सहयोग से पाठशाला स्थापित की और छात्रों को पढ़ाने लगा।

चाणक्य बड़ा विद्वान् था। उसने तक्षशिला के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में शिक्षा पाई थी। राजनीति, वैद्यक, रसायन-शास्त्र और ज्योतिष-शास्त्र—सभी विषयों का वह पंडित था।

चाणक्य एकदम काला-कलूटा था। अंगारों-जैसी लाल-लाल उसकी आंखें बड़ी डरावनी लगती थीं। सिर पर लम्बी चोटी और कुछ कुरूप दांत उसे और भी कुरूप बना देते थे। पर बाहरी रूप से क्या होता है! वह विद्या का सागर था। वह केवल पुस्तक-पंडित ही नहीं था, अपने ज्ञान को कार्यरूप में परिणत करने में भी समर्थ था। इसके साथ ही वह ऐसा दृढ़-निश्चयी भी था कि जो कुछ सोच लेता, उसे जब तक पूरा नहीं कर लेता, चैन से न बैठता। बड़ी तेज बुद्धि थी उसकी। और वह मानता था कि आदमी बुद्धि के बल पर सब-कुछ कर सकता है।

पाठशाला में छात्रों की संख्या दिनों-दिन बढ़ने लगी।

अब शकटार कोई ऐसा उपाय सोचने लगा जिससे राजा महापद्मनन्द और चाणक्य की आपस में ठन जाए।

एक दिन राजा के यहां श्राद्ध था। ब्राह्मण-भोज के लिए शकटार ने चाणक्य को भी बुला लिया। वह जानता था कि राजा जब इस काले-कलूटे ब्राह्मण को पंक्ति में बैठे देखेगा तो जरूर बिगड़ेगा। और अगर राजा ने चाणक्य का अपमान किया तो चाणक्य भी बदला लेगा और शकटार का मनचाहा हो जाएगा।

हुआ भी यही। जब मुख्यमंत्री राक्षस के साथ राजा आया तो उसने देखा कि यह काला ब्राह्मण कहां से आ गया! मैंने तो इसे बुलाया नहीं था। राजा कुरूप चाणक्य को देखकर बिगड़ उठा।

राजा ने पूछा, "तू कौन है? बिना बुलाए यहां क्यों आ गया? तुझे इन विद्वान् ब्राह्मणों के बीच में बैठने की हिम्मत कैसे पड़ी?"

भोजन के लिए बैठी ब्राह्मण-मंडली में चाणक्य का घोर अपमान राजा ने कर डाला। अब चाणक्य क्या करे! उससे न बैठे बनता था, न उठते। मारे क्रोध के वह कांप रहा था और मुंह से बात नहीं निकल रही थी।

जब चाणक्य ने उसे कोई उत्तर नहीं दिया तो राजा ने कहा, "इसे चोटी से पकड़कर यहां से निकाल दो!"

नंदवंश का नाश करने की प्रतिज्ञा करते हुए चाणक्य

चाणक्य जब तक आसन से उठता, उससे पहले ही नौकर उसे चोटी से पकड़कर धक्के देते हुए बाहर निकालने लगा।

चाणक्य ने नौकर को डांटकर चोटी छुड़ा ली और क्रोध में लाल-पीला होते हुए

बोला, "ओ राजा नन्द ! कान खोलकर सुन ले ! तूने घर बुलाकर मेरा जो अपमान किया है, इसका फल तुझे भोगना पड़ेगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि जब तक नन्द-वंश का नाश न कर लूंगा, चोटी में गांठ नहीं लगाऊंगा। तेरे वंश का नाश न कर दूं तो मैं चणक का पुत्र चाणक्य नहीं !"

चाणक्य की बात सुनकर वहां बैठे ब्राह्मण और राजा हँसने लगे। राजा ने उसे फटकारते हुए कहा, "जा-जा ! तेरे जैसे बहुत देखे हैं।"

चाणक्य वहां से निकला तो रास्ते में शकटार मिल गया। वह उसे अपने घर ले गया। उसने चाणक्य को भोजन कराया और राजा की जी भरकर निन्दा की। अपनी दुर्दशा का रोना रोते हुए उसने चाणक्य को चुपके से बताया कि राजा का वंश-नाश करने में मैं आपकी भरसक सहायता करूंगा।

मुरा का पुत्र चन्द्रगुप्त बड़ा सुन्दर व स्वस्थ था। देखने में वह राजकुमार-जैसा लगता था, पर दासी का पुत्र होने के कारण उसे कोई मुंह नहीं लगाता था। उसे राज-सभा में बैठने तक का अधिकार नहीं था। राजकुमार भी उसे बात-बात में अपमानित करते। नौकर-चाकर भी उसकी परवाह नहीं करते थे। वह जानता था कि उसे जीवन-भर वहां इसी तरह अपमानित होना पड़ेगा। वैसे वह राजकुमारों की अपेक्षा अधिक समझ-दार और सुन्दर था, पर इससे क्या होता है ! दासी-पुत्र को राज्य में तो कोई अधिकार मिलने वाला नहीं था। उसके सुन्दर और समझदार होने के कारण राजकुमार उससे जलते भी थे। चन्द्रगुप्त ने अपनी समझदारी का सिक्का तो सबपर बिठा रखा था, पर फिर भी उसका कहीं सम्मान नहीं था।

कहते हैं, एक बार रोम के बादशाह ने राजा महापद्मनन्द के पास पिंजरे में बन्द एक शेर की मूर्ति भेजी और कहला भेजा कि पिंजरे को खोले और तोड़े बगैर अगर इस शेर को बाहर निकाल दें, तो मैं समझूंगा कि आपके यहां भी कोई समझदार आदमी है।

सारी राजसभा इसपर विचार करने लगी, पर किसीको कोई भी उपाय न सूझा। बालक चन्द्रगुप्त भी झांककर यह सब देख रहा था। वह आगे बढ़ा और बोला, "मैं निकाल दूंगा।"

बालक की ढिठाई पर राजसभा के सब लोग हँस पड़े।

राजा महापद्मनन्द तो पहले ही चन्द्रगुप्त को मुंह नहीं लगाता था। वह गुस्से से बोला, "अगर तू इसे निकाल न सका तो तुझे भी इसी पिंजरे में बन्द कर दिया जाएगा।"

चन्द्रगुप्त ने कहा, "मुझे स्वीकार है।"

उसने सोचा कि अगर यह मिट्टी आदि पानी में घुलने वाली चीजों का बना होगा तो पानी से घुल जाएगा; और अगर गर्मी से पिघलने वाली चीज से बना होगा तो आंच से पिघल जाएगा। उसने पहले तो पिंजरे को पानी में रखा किन्तु उससे शेर की मूर्ति जरा भी नहीं गली। फिर उसने लोहे की लम्बी-लम्बी सलाखें गर्म कीं और सिंह को छुआईं। सिंह मोम का बना हुआ था, इसलिए गर्म सलाखों से पिघलने लगा। सारा मोम पिघलकर पिंजरे के बाहर आ गया।

बालक की इस समझदारी पर सारे दरबारी चकित रह गए।

इसी तरह एक बार एक दूसरे राजा ने एक दहकती हुई अंगीठी, एक बोरा सरसों और एक मीठा फल अपने दूत के द्वारा महापद्मनन्द के पास भेजा।

राजसभा में कोई भी इसका मतलब नहीं समझ सका।

चन्द्रगुप्त ने कहा, "मैं इसका मतलब समझा सकता हूं। दहकती अंगीठी का मतलब है कि मेरा गुस्सा आग की तरह शत्रुओं को जला देता है। सरसों के बोरे का मतलब है कि जैसे बोरे में सरसों के अनगिनत दाने हैं, वैसे ही मेरी फौज में अनगिनत सिपाही हैं। इस मीठे फल का मतलब है कि अगर हमारे साथ मित्रता रखोगे तो उसका फल भी मीठा होगा।"

इसके उत्तर में चन्द्रगुप्त ने एक घड़ा पानी, पिंजरों में बन्द कुछ तीतर, और एक कीमती रत्न भेजा। पानी का मतलब था कि तुम्हारे क्रोध को हम अपनी नीति से उसी तरह शान्त कर देंगे जैसे पानी आग को शान्त कर देता है। तीतरों से मतलब था कि जैसे ये तीतर सरसों के दानों को चुगकर समाप्त कर सकते हैं, वैसे ही हमारे वीर भी तुम्हारी अनगिनत सेना को समाप्त कर सकते हैं। रत्न से मतलब था कि हमारी मित्रता अमूल्य है और सदा एक-सी रहने वाली है। फल तो दो दिन रखा रहने पर सड़-गल भी सकता है, पर रत्न तो सदा एक-सा ही रहेगा।

इस समझदारी के कारण ही राजा महापद्मनन्द और उसके राजकुमार चन्द्रगुप्त से चिढ़ते थे। चन्द्रगुप्त समझता था कि मैं सब राजकुमारों से बड़ा हूं, फिर चाहे दासी का पुत्र ही क्यों न हूं, राज्य पर मेरा भी हक है।

चाणक्य और शकटार ने सलाह करके चन्द्रगुप्त को अपनी ओर मिला लिया। उन्होंने उसे कहा कि हम तुम्हें ही पाटलिपुत्र का राजा बनाएंगे।

अन्धा क्या चाहे, दो आंखें! चन्द्रगुप्त ने भी सोचा कि राजा महापद्मनन्द तो मुझे कुछ देगा नहीं, इसलिए इनसे मिल जाने में ही लाभ है।

शकटार अब भी मंत्री था। वह अन्दर के सारे भेद चाणक्य को बता देता था। राजा की दासी विचक्षणा को भी उसने अपने साथ मिला लिया था। इसलिए महलों की गुप्त से गुप्त बातें भी उन्हें मालूम हो जाती थीं।

राजा महापद्मनन्द का राज्य दूर-दूर तक फैला हुआ था। उत्तर-पश्चिम में एक पहाड़ी राज्य था। महापद्मनन्द ने अपने एक सम्बन्धी पर्वतक को वहां का छोटा राजा बना दिया था। वही उस राज्य का शासन करता था। पर्वतक का पुत्र था मलयकेतु।

चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को सिखा-पढ़ाकर पर्वतक के पास भिजवा दिया। चाणक्य की योजना थी कि पर्वतक को अपनी ओर मिला लिया जाए। पर्वतक के पास फौज भी थी। जरूरत पड़ने पर वह फौज भी काम आ सकती थी। उसने पर्वतक से कहा कि अगर चन्द्रगुप्त राजा बन गया तो तुम्हें पाटलिपुत्र के राज्य का आधा हिस्सा दे दिया जाएगा।

इधर चाणक्य ने, जो कि वैद्यक और रसायन-शास्त्र का जानकार था, एक ऐसा जहर तैयार किया जो धीरे-धीरे अपना असर करता था। राजा महापद्मनन्द की दासी के द्वारा वह जहर राजा महापद्मनन्द और उसके राजकुमारों को खिला दिया गया।

धीरे-धीरे सभी बीमार पड़ने लगे और छः मास के अन्दर सब चल बसे। किसी को पता भी न लगा कि ये जहर खाने से मरे हैं।

महापद्मनन्द के मुख्यमंत्री राक्षस ने महापद्मनन्द के भाई सर्वार्थसिद्धि को राज्य-सिंहासन पर बिठाया और स्वयं सारा राजकाज चलाने लगा।

चाणक्य ने राजा महापद्मनन्द और उसके आठ पुत्रों को तो मरवा डाला, पर अभी भी चन्द्रगुप्त को पाटलिपुत्र के राज्य पर बिठाने का काम बाकी था।

चन्द्रगुप्त के पास अपनी फौज तो थी नहीं, इसलिए चाणक्य ने महापद्मनन्द के दूर के सम्बन्धी और अधीन पहाड़ी राजा पर्वतक को अपनी ओर मिला लिया और पाटलिपुत्र पर चढ़ाई करने के लिए उकसाया।

चाणक्य ने उसके साथ वादा किया कि अगर पाटलिपुत्र का राज्य हाथ आ गया तो आधा राज्य पर्वतक को और आधा राज्य चन्द्रगुप्त को मिलेगा।

पर्वतक की फौज पाटलिपुत्र पर चढ़ आई। दोनों फौजों में खूब लड़ाई हुई, और अन्त में पाटलिपुत्र की फौज हार गई।

सर्वार्थसिद्धि ने भागकर अपनी जान बचाई। वह एक जंगल में जा छिपा।

राक्षस ने निश्चय किया कि अब अगर यहां रहा तो जान खतरे में पड़ जाएगी। इसलिए वह अपने परिवार को अपने मित्र सेठ चन्दनदास के पास छोड़कर जंगल में

गए हुए राजा सर्वार्थसिद्धि को वापस लौटाने के उद्देश्य से उसे खोजने चल पड़ा।

पर चाणक्य भी कच्ची गोलियों से नहीं खेला था। उसने सोचा कि सर्वार्थसिद्धि जीता रहा तो कभी भी वह अपने अधिकार के लिए लड़ाई कर सकता है। इसलिए उसने अपने आदमी भेजकर सर्वार्थसिद्धि की हत्या करवा दी।

मुख्यमंत्री राक्षस जब उसे खोजता हुआ पहुंचा तो वह मरा पड़ा था।

चन्द्रगुप्त के रास्ते का कांटा सर्वार्थसिद्धि भी मारा गया, तो पाटलिपुत्र का राज्य चन्द्रगुप्त को मिल गया।

चाणक्य, चन्द्रगुप्त का मुख्यमंत्री राक्षस को बनाना चाहता था। राक्षस बड़ा स्वामिभक्त और नीति-कुशल था। चाणक्य के मन में उसके प्रति बड़ा मान-सम्मान था। पर राक्षस पद का भूखा नहीं था। वह नन्द-वंश का स्वामिभक्त मंत्री था और चन्द्रगुप्त को राजा मानने के लिए तैयार नहीं था।

चाणक्य ने यह भी सोचा कि अगर राक्षस राज्य-सेवा स्वीकार नहीं करेगा तो बाहर रहकर कुछ-न-कुछ गड़बड़ करता रहेगा। इसलिए चाणक्य ने राक्षस को जैसे-तैसे मुख्यमंत्री बनाने के लिए चालें चलनी प्रारम्भ कर दीं और जब तक राक्षस मान नहीं जाता तब तक स्वयं मुख्यमंत्री का काम संभालने का निश्चय किया।

चाणक्य ने राक्षस को मुख्यमंत्री बनाने के लिए कहला भेजा, किन्तु राक्षस ने अस्वीकार कर दिया।

राक्षस पाटलिपुत्र से दूर रहकर ऐसी चालें चलने लगा जिससे चन्द्रगुप्त और राजा पर्वतक के बीच फूट पड़ जाए।

राक्षस ने सोचा कि जब तक पर्वतक को हम अपनी ओर नहीं मिलाएंगे, काम नहीं चलेगा। राक्षस सीधा पर्वतक के राज्य में गया और उसके बूढ़े मंत्री से मिला। राक्षस ने पर्वतक के मंत्री को समझाया, "चाणक्य बड़ा धोखेबाज है। उसने इतने दिन बीत जाने पर भी पाटलिपुत्र का आधा राज्य राजा पर्वतक को नहीं दिया। वह बड़ा झूठा है और अपने वादे को कभी पूरा नहीं करेगा। इसलिए आप अपने राजा को समझाइए, अगर वे हमारे साथ मिल जाएं तो हम उनको सारे पाटलिपुत्र राज्य का राजा बना देंगे।"

राक्षस की बातें पर्वतक के बूढ़े मंत्री को जंच गईं। उसने एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमें ये सारी बातें लिखने के बाद यह भी लिखा—"मैं अब बहुत बूढ़ा हो गया हूं और

पर्वतक ने अपने बूढ़े मंत्री का पत्र पढ़ा और वह उसका सुझाव मान गया।

राज-काज संभालने में असमर्थ हूं। आप राक्षस को अपना मंत्री बना लें। वे बड़े नीति-कुशल हैं। उनकी सलाह से ही सारा काम करें।'

पर्वतक को अभी तक पाटलिपुत्र का आधा राज्य नहीं मिला था, इसलिए उसने अपने मंत्री का पत्र पढ़कर उसकी बात मान ली और गुप्त पत्र भेजकर राक्षस को अपना मंत्री बना लिया। ऊपर से वह चाणक्य से भी मिला रहा।

चाणक्य ने चारों ओर अपने जासूस छोड़ रखे थे। कोई सपेरा बना घर-घर

तमाशा दिखाता फिरता था तो कोई साधु का भेस बनाए घूमता; कोई शत्रु का मित्र बनकर वहां की गुप्त खबरें लाता। यही नहीं, उसने राक्षस के भेदियों के कामों का पता लगाने के लिए भी जासूसों की एक टोली रखी हुई थी। वह जानता था कि राक्षस भी कम नहीं है। इसलिए अपने महलों में भी जासूसों का जाल बिछा रखा था।

राक्षस भी यह जानता था कि केवल पर्वतक के भरोसे बैठे रहने से काम नहीं चलेगा। इसलिए उसने कुल्लू, मलय, कश्मीर, सिन्धु और पारस—इन पांच देशों के राजाओं को भी मौके पर सहायता करने के लिए कह रखा था।

सबसे पहले राक्षस ने महलों की एक पुरानी दासी को फुसलाकर चन्द्रगुप्त को जहर खिलाने की योजना बनाई।

दासी महलों में रहती हुई, चन्द्रगुप्त के नौकरों से हेल-मेल बढ़ाती रही। वह सबसे घुल-मिलकर प्रेम की बातें करती। मीठा बोलती और सबका काम कर देती।

उसकी चाल-ढाल को देखकर चाणक्य का माथा ठनका। उसने उस दासी पर नजर रखने के लिए अपने एक जासूस को लगा दिया। यह जासूस उस जासूस दासी से हेल-मेल बढ़ाने लगा। दासी को क्या पता था कि यह जो मुझसे इतनी चिकनी-चुपड़ी बातें करता रहता है, वास्तव में मेरे पीछे लगा हुआ, चाणक्य का जासूस है। वह तो अपने-आपको ही सबसे चतुर समझती थी और सोच रही थी कि मैं सबको बुद्ध बना रही हूं।

उधर चाणक्य एक ढेले से दो शिकार करना चाहता था। उसकी चाल यह थी कि चन्द्रगुप्त को खिलाने के लिए भेजा हुआ जहर राजा पर्वतक को खिला दिया जाए और उससे छुट्टी मिले। न वह जीता रहे, न उसे आधा राज्य देना पड़े। क्योंकि, अगर वह अपने वादे से मुकरकर उसे आधा राज्य देने से इन्कार कर देता तो प्रजा में बड़ी बदनामी होती। सब यही कहते कि चाणक्य झूठा और धोखेबाज है। प्रजा को अपने साथ रखना बहुत जरूरी था। इसलिए प्रजा पर अपने अच्छा होने की धाक जमाना भी जरूरी था।

चाणक्य की चालाकी के आगे राक्षस की चाल बेकार गई। उसकी जासूस दासी ने जो जहर वाला भोजन दिया, वह तिकड़म से राजा पर्वतक को खिला दिया गया। जहर ने अपना असर दिखाया और पर्वतक मर गया। सांप भी मर गया और लाठी भी न टूटी। किसीके मन में यह खयाल भी न आया कि पर्वतक को मारने में चाणक्य का हाथ है। उलटे चाणक्य ने यह अफवाह फैला दी कि राक्षस ने जहर देकर पर्वतक को मरवा डाला।

चन्द्रगुप्त को बचाया, पर्वतक को मरवाया और सारा दोष राक्षस के मत्थे मढ़ दिया—इसे कहते हैं चाणक्य-नीति !

पर इतना करने पर भी रास्ता साफ नहीं हुआ। राजा पर्वतक का राजकुमार मलयकेतु पाटलिपुत्र में ही था। क्या हुआ जो बाप मर गया, बेटा तो बैठा है ! पाटलिपुत्र का आधा राज्य उसे मिलना चाहिए। अब चाणक्य ने अपने रास्ते के इस कांटे को भी साफ करने का फैसला किया।

अपने एक जासूस भागुरायण को चाणक्य ने बहुत पहले से मलयकेतु के पीछे लगा रखा था। वह उसका मित्र और सलाहकार बन गया था। मलयकेतु के पास अपनी अक्ल तो थी नहीं, वह भागुरायण की सलाह से ही सारे काम करता था।

चाणक्य ने भागुरायण को चुपके से एक उपाय बता दिया।

भागुरायण ने मलयकेतु से कहा, "मित्र मलयकेतु ! यह जो चाणक्य है न, यह बड़ा धोखेबाज है। इसकी चालाकियों को समझना आसान काम नहीं है। मुझे पक्का पता लगा है कि आपके पिताजी को इसी दुष्ट ने जहर देकर मरवाया है और नाम लगा दिया राक्षस का। अब वह आपको मरवाना चाहता है जिससे वादे के अनुसार पाटलिपुत्र का आधा राज्य न देना पड़े। उसकी नीयत अच्छी नहीं है। यदि आप अपना भला चाहते हैं तो यहां से खिसक जाइए।"

मलयकेतु को लगा कि भागुरायण की ही बात सच है। वह पाटलिपुत्र से भाग खड़ा हुआ और राक्षस के पास जा पहुंचा। उसने सोचा कि राक्षस की मदद से पिता की हत्या का बदला लिया जा सकता है; दोनों मिलकर चन्द्रगुप्त को मार भगाएंगे और तब पाटलिपुत्र का सारा राज्य अपना हो जाएगा।

चाणक्य की चाल चल गई। पर्वतक मर गया, मलयकेतु भाग गया, अब उससे आधा राज्य मांगने वाला कोई न रहा।

चाणक्य चाहता तो मलयकेतु और राक्षस दोनों को मरवा सकता था, पर उसने ऐसा नहीं किया। इसमें भी उसकी एक गहरी चाल थी। अगर मलयकेतु को भी मरवा दिया जाता तो लोग समझते कि यह चाणक्य का ही काम है। फिर तो पर्वतक को मारने की बात भी उसीके मत्थे मढ़ी जाती। इसीलिए मलयकेतु को मारा नहीं और भगा दिया। दूसरे, पांच पहाड़ी राजा, जो मलयकेतु के साथी थे, वे भी बिगड़ जाते और अपनी-अपनी फौज लेकर चन्द्रगुप्त पर चढ़ाई कर देते। चन्द्रगुप्त ने अभी नया-नया राज्य संभाला था। वह लड़ाई में उलझ जाता तो राज्य से हाथ धो बैठता।

चाणक्य राक्षस की समझदारी और राज-भक्ति का लोहा मानता था, इसीलिए

उसे चन्द्रगुप्त का मुख्यमन्त्री बनाना चाहता था। पाटलिपुत्र राज्य की प्रजा पर राक्षस का अच्छा प्रभाव था, इसलिए उसे मारने में लाभ की बजाय हानि थी। अब भी प्रजा के लोग राक्षस को बहुत चाहते थे। जरूरी था कि प्रजा पर इस बात का सिक्का जमाया जाए कि चन्द्रगुप्त और चाणक्य दोनों भले आदमी हैं और किसीका बुरा नहीं करना चाहते।

अब मलयकेतु और राक्षस दोनों मिल गए। दोनों चन्द्रगुप्त और चाणक्य को अपना शत्रु समझते थे। मलयकेतु तो अपने पिता की हत्या का बदला लेना चाहता था, और राक्षस नन्द-वंश के नाश का। मलयकेतु चन्द्रगुप्त को मारकर पाटलिपुत्र का राजा बनना चाहता था और राक्षस मंत्री। दोनों को एक-दूसरे की सहायता की आवश्यकता थी, इसलिए दोनों एक-दूसरे के मित्र बन गए।

मलयकेतु और राक्षस ने इस बात का खूब प्रचार किया कि चाणक्य ने ही जहर खिलाकर राजा पर्वतक को मरवा डाला है। इसका परिणाम यह हुआ कि पांच छोटे सामन्त राजा चाणक्य पर बहुत बिगड़े। कुल्लू का राजा चित्रवर्मा, मलय का राजा सिंहनाद, कश्मीर का राजा पुष्कराक्ष, सिन्धु देश का राजा सिन्धुसेन और पारस का राजा मेघाक्ष पाटलिपुत्र पर चढ़ाई करने के लिए तैयार हो गए।

इन सब सामन्त राजाओं के बलबूते पर राक्षस और मलयकेतु चढ़ाई करने की तैयारी में जुट गए।

चाणक्य ने भी इन सबमें फूट डलवाने की योजना बनाई हुई थी।

एक दिन चाणक्य के दूत ने आकर बताया कि तीन आदमी ऐसे हैं जो राक्षस के पक्के मित्र और चन्द्रगुप्त के पक्के शत्रु हैं।

चाणक्य ने पूछा, "नाम बताओ!"

दूत बोला, "एक तो जीवसिद्धि है। उसीके हाथ जहर भेजकर राक्षस ने पर्वतक को मरवाया है। दूसरा है शकटदास। वह राक्षस के लिए कठिन-से-कठिन काम भी कर सकता है; यहां तक कि जान भी दे सकता है। तीसरा है चन्दनदास, जिसके घर राक्षस अपने परिवार को छोड़ गया है।"

यह सब सुनकर चाणक्य मन-ही-मन बड़ा प्रसन्न हुआ। बात यह थी कि जीवसिद्धि और शकटदास तो चाणक्य के भेजे हुए जासूस ही थे। हां, चन्दनदास ही एक ऐसा सच्चा मित्र था जो राक्षस के लिए बड़े-से-बड़ा खतरा मोल लेने के लिए तैयार था।

चाणक्य की जासूसी का कमाल यह था कि उसके अपने जासूस भी अपने पक्ष के

दूसरे जासूसों को जानते-पहचानते तक नहीं थे। उसके अपने जासूसों तक को इस बात का पता नहीं था कि राक्षस ने चन्द्रगुप्त को मरवाने के लिए जहर भेजा था, पर्वतक को मरवाने के लिए नहीं। यह तो चाणक्य की चालाकी थी कि वह चन्द्रगुप्त के बदले पर्वतक को खिला दिया गया।

चाणक्य ने दूत से पूछा, "तुम्हें यह पता कैसे लगा कि राक्षस अपने परिवार को चन्दनदास के घर छोड़ गया है ?"

दूत ने झट से मंत्री राक्षस के नाम वाली अंगूठी निकालकर सामने रख दी।

राक्षस के नाम वाली अंगूठी को देखते ही चाणक्य इतना प्रसन्न हुआ कि जैसे अंगूठी नहीं, राक्षस ही उसके हाथ आ गया हो।

चाणक्य ने उससे पूछा, "यह अंगूठी तुम्हें कैसे मिली ?"

दूत बोला, "मैं जोगी का भैस बनाकर चन्दनदास के घर में चला गया। घर के भीतर से एक बड़ा सुन्दर बालक बाहर निकला। पर्दे के भीतर से एक स्त्री निकली और बालक को पकड़कर भीतर ले गई। इतने में उस स्त्री की उंगली से अंगूठी गिर पड़ी और मैं चुपचाप उठाकर खिसक आया।"

चाणक्य ने कहा, "तुम बहुत चालाक जासूस हो। तुमने बहुत बड़ा काम किया है। इसके लिए तुम्हें इनाम दिया जाएगा। अब जाओ और अपना काम करो।"

दूत चला गया।

इतने में चन्द्रगुप्त का सन्देशा लेकर एक दासी आ गई; बोली, "राजा चन्द्रगुप्त ने आपको प्रणाम कहा है। वे स्वर्गीय राजा पर्वतक का क्रिया-कर्म करना चाहते हैं। उनकी इच्छा है कि राजा पर्वतक के गहने ब्राह्मणों को दान कर दिए जाएं।"

चाणक्य ने कहा, "यह तो बहुत अच्छी बात है। पर्वतक हमारे मित्र थे। उनका क्रिया-कर्म राजसी ढंग से होना ही चाहिए; खूब दान-दक्षिणा भी देनी चाहिए। पर दान अच्छे विद्वान् ब्राह्मणों को ही मिलना चाहिए। तुम जाकर चन्द्रगुप्त से कह दो कि मैं जिन विद्वान् ब्राह्मणों को भेजूं, गहने उन्हींको दान में दिए जाएं।"

"जो आज्ञा महाराज !" कहकर दासी चलती बनी।

चाणक्य ने एक नौकर को भेजकर अपने तीन ब्राह्मण जासूस, पर्वतक के गहने दान में लेने के लिए चन्द्रगुप्त के पास भेज दिए।

चाणक्य कलम-दवात लेकर कागज पर कुछ लिखने लगा, फिर थोड़ी देर बाद कुछ सोचकर रुक गया। उसने एक नौकर को बुलाकर कहा, "मेरी लिखावट बड़ी भद्दी है। इससे तुम यह चिट्ठी शकटदास से लिखवा लाओ। उसका लेख बड़ा सुन्दर है। पर

उसे यह न बताना कि मुझे चाणक्य ने भेजा है। पत्र के प्रारम्भ में लिखना, 'किसीका लिखा कुछ, कोई पढ़े।' समझे ?"

नौकर शकटदास के पास गया और चिट्ठी लिखवा लाया।

चाणक्य ने लेख की प्रशंसा करते हुए अपने शिष्य को राक्षस के नाम वाली अंगूठी देते हुए कहा, "लो, इस चिट्ठी को लिफाफे में बन्द करके ऊपर से यह मुहर लगा दो।"

शकटदास तो चाणक्य का जासूस था ही। पर वह राक्षस के खास काम करने वालों में गिना जाता था। चाणक्य की चाल थी कि शकटदास की लिखावट और राक्षस की मुहर से लोग यही समझेंगे कि यह चिट्ठी राक्षस ने ही लिखवाई है।

चाणक्य ने सिद्धार्थक और शकटदास को आगे की सारी योजना समझा दी थी कि कब, कहां और क्या काम करना है।

उधर पर्वतक के क्रिया-कर्म में गहनों का दान लेने जो ब्राह्मण गए हुए थे, वे गहने लेकर चाणक्य के पास आए। चाणक्य ने हँसते हुए कहा, "तुम लोग बहुत अच्छे ब्राह्मण हो। अच्छा, यह बताओ कि तुम लोगों पर किसीको शक तो नहीं हुआ कि तुम चाणक्य के जासूस हो ? खैर, अब तुम्हें ये गहने राक्षस के हाथ बेचने हैं। पर इस काम में बड़ी सावधानी की जरूरत है। तुम किसी खास उद्देश्य से ये गहने बेच रहे हो, ऐसा सन्देह राक्षस के मन में पैदा नहीं होना चाहिए। इसलिए बहुत कम दाम मत लेना, लेकिन कम दाम मिल रहे हैं, इसलिए बिना बेचे भी मत आना। ऐसा दिखाना कि तुम्हें रुपयों की तुरन्त आवश्यकता है, इसीलिए गहने बेच रहे हो।"

इधर चाणक्य ने एक चाल और चली। उसने ढिंढोरा पिटवा दिया कि जीवसिद्धि ने राक्षस के कहने से राजा पर्वतक को जहर देकर मार डाला है, इसलिए उसे देश-निकाले का दण्ड दिया जाता है; और इस बात का भी ढिंढोरा पिटवा दो कि शकटदास राक्षस के कहने से प्रजा को राजा चन्द्रगुप्त के विरुद्ध भड़काता रहता है, इसलिए उसे सूली पर टांगने का दण्ड दिया जाता है। उसके परिवार के लोगों को जेल में बन्द किया जाता है।

सूली पर टांगने के लिए जो चाण्डाल रखे गए थे, वे भी चाणक्य के जासूस थे। उनको बता दिया गया था कि जब तुम शकटदास को सूली देने लगोगे और सिद्धार्थक नामक जासूस आए तो तुम डरकर भाग जाना और वह शकटदास को छुड़ाकर ले जाएगा।

यही हुआ भी। सिद्धार्थक शकटदास को छुड़ाकर ले गया।

यह सब ढोंग इसलिए रचा गया था कि राक्षस को पूरा विश्वास हो जाए कि ये

दोनों चाणक्य के पक्के शत्रु हैं। राजनीति में अपने शत्रु का शत्रु अपना मित्र होता है, इसलिए ये दोनों राक्षस के मित्र हुए।

इधर चाणक्य ने सिपाही भेजकर राक्षस के मित्र चन्दनदास को बुला भेजा।

चन्दनदास भी समझ गया कि दाल में कुछ काला है। चन्दनदास राक्षस का गहरा मित्र था और उसने ही राक्षस-परिवार को अपने घर में रखा हुआ था। शत्रु के परिवार को आश्रय देना भी एक अपराध है।

चाणक्य शत्रुओं के लिए कितना निर्दय और कठोर है, यह भी किसीसे छिपा हुआ नहीं था। इसलिए चाणक्य के पास जाने से पहले ही उसने राक्षस के परिवार को अपने घर से हटाकर दूसरी जगह भेज दिया।

इतनी व्यवस्था करने के बाद चन्दनदास चाणक्य के पास पहुंचा। वह चाणक्य को प्रणाम करके खड़ा हो गया।

इधर-उधर की दो-चार बातें पूछने के बाद चाणक्य ने कहा, "आप राजा चन्द्रगुप्त के विरुद्ध जो कार्य कर रहे हैं, उसे छोड़ दीजिए। यह राजद्रोह है और राजद्रोह की सजा होती है मौत !"

सेठ चन्दनदास ने कहा, "महाराज ! मैंने तो कभी ऐसा कोई काम किया नहीं जो राजद्रोह हो। वैसे आप मेरे किस काम को अनुचित समझते हैं ?"

चाणक्य—आपने हमारे शत्रु राक्षस के परिवार को अपने घर में रखा हुआ है, यह राजद्रोह नहीं तो और क्या है ?

चन्दनदास—महाराज ! यह तो किसीने आपसे झूठ-मूठ कह दिया है। राक्षस का परिवार मेरे घर पर नहीं है।

चाणक्य—सेठ चन्दनदास ! आप दोहरा अपराध कर रहे हैं—परिवार को अपने घर में रखने का और इस बात को छिपाने का।

चन्दनदास—महाराज ! पहले तो राक्षस का परिवार मेरे घर में था, किन्तु अब नहीं है। इसीलिए कहा कि मेरे घर में नहीं है।

चाणक्य—यहां छल-कपट से काम नहीं चलेगा। राक्षस के परिवार को हमारे हवाले कर दीजिए। यही आपकी राजभक्ति का प्रमाण होगा।

चन्दनदास—महाराज ! मैंने निवेदन किया कि अब मेरे घर पर नहीं है।

चाणक्य—अब नहीं है तो कहां गया ? क्या तुम नहीं जानते ?

चन्दनदास—न जाने कहां गया। मैं कुछ नहीं जानता।

चाणक्य—इधर-उधर की बातें छोड़कर उसे राजकर्मचारियों को सौंप दो !

चन्दनदास—एक तो मेरे यहां राक्षस का कुटुम्ब है ही नहीं; यदि होता तो भी न सौंपता।

चाणक्य—तो यह तुम्हारा आखिरी फैसला है ?

चन्दनदास—जी हां।

चाणक्य—तो तुम्हें इसका दण्ड भोगना पड़ेगा !

चन्दनदास—मैं दण्ड भोगने के लिए तैयार हूं।

चाणक्य ने क्रोध से गरजते हुए, सिपाहियों को बुलाकर आज्ञा दी कि चन्दनदास की सारी सम्पत्ति को राज्य के कोषागार में जमा करा दो और इसके सारे परिवार को कैद कर लो।

उसी समय चाणक्य की आज्ञा से चन्दनदास को और उसके परिवार को कैद में डाल दिया गया। उसकी सारी सम्पत्ति भी जब्त कर ली गई।

एक दिन राक्षस चिन्ता में डूबा बैठा था कि मलयकेतु के नौकर ने आकर कुछ गहने राक्षस को देते हुए कहा, "ये गहने आपके लिए राजकुमार मलयकेतु ने भेजे हैं। उन्होंने कहा है कि आजकल आप बहुत दुःखी और उदास रहते हैं। कभी कोई गहना भी नहीं पहनते। यों अपने जी को जलाने से क्या लाभ ? ये गहने आप अवश्य पहनें !"

मलयकेतु का मान रखने के लिए राक्षस ने उसके भेजे हुए गहने पहन लिए।

इसी समय राक्षस का एक जासूस पाटलिपुत्र की खबरें लेकर आया। उसने बताया—"आपने चन्द्रगुप्त को मरवाने के लिए जिस राजवैद्य को अपनी ओर मिला लिया था, उस राजवैद्य ने दवाई में जहर मिलाकर चन्द्रगुप्त को पिलाना चाहा, पर चाणक्य को पता लग गया और उसने वह दवाई राजवैद्य को ही पिला दी जिससे राजवैद्य मर गया। दारुवर्मा नाम का कारीगर भी मारा गया।"

वास्तव में बात यों हुई कि जब पर्वतक मारा गया और मलयकेतु भाग गया तो चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को सच्चा साबित करने के लिए पर्वतक के भाई वैरोधक को बुलाकर, उसीको आधा राज्य देने का ढोंग रचा।

ज्योतिषियों को बुलाकर राज्याभिषेक का मुहूर्त निकाला गया। बढ़ई और लुहार नगर को सजाने के लिए बड़े-बड़े तोरण-द्वार बनाने लगे।

राक्षस से मिले हुए दारुवर्मा कारीगर ने योजना बनाई कि मुख्य तोरण-द्वार के नीचे से ज्यों ही चन्द्रगुप्त हाथी पर बैठकर निकलेगा, उसी समय तोरण-द्वार को उसके

ऊपर गिरा दिया जाएगा, जिससे कुचलकर चन्द्रगुप्त मर जाएगा।

चाणक्य को अपने जासूसों से इस योजना का भी पता चल गया। चाणक्य ने चालाकी से वैरोधक को चन्द्रगुप्त के हाथी पर बिठा दिया। लोगों ने वैरोधक को ही चन्द्रगुप्त समझ लिया। वही हाथी पर बैठा आगे चल रहा था।

दारुवर्मा धोखा खा गया। उसने वैरोधक को ही चन्द्रगुप्त समझ लिया। उसने तोरण-द्वार में कारीगरी से ऐसी कल लगा रखी थी, जिसे खींचते ही तोरण-द्वार भर-भराकर गिर पड़े। वहां एक और आदमी भी राक्षस ने गुप्ती (छिपी हुई कृपाण) देकर खड़ा कर रखा था, जो चन्द्रगुप्त को गुप्ती घोंपने के लिए नियुक्त था।

तोरण के पास हाथी तेजी से दौड़ पड़ा, जिससे दारुवर्मा का निशाना चूक गया। नीचे खड़ा कृपाण वाला जासूस तो तोरण-द्वार के नीचे दबकर मर गया। जब दारु-वर्मा ने देखा कि उसका निशाना चूक गया तो उसने वैरोधक को चन्द्रगुप्त समझकर लोहे की छड़ दे मारी। छड़ की चोट से वैरोधक मारा गया। कारीगर दारुवर्मा पकड़ा गया और भीड़ के लोगों ने गुस्से में दारुवर्मा को भी मार डाला।

राक्षस की सारी चालें उलटी पड़ रही थीं। चाणक्य उसकी चालों को तो बेकार करता ही था, उल्टे विरोधियों को मरवा देता और प्रचार करता कि यह सब राक्षस कर रहा है।

राक्षस ने एक चाल और चली।

उसने कारीगरों को बहुत-सा धन देकर एक लम्बी सुरंग बनाने को कहा, जो चन्द्रगुप्त के सोने वाले कमरे तक खोदी जानी थी। योजना यह थी कि सुरंग के रास्ते चन्द्रगुप्त के सोने के कमरे में पहुंचकर उसे सोते हुए ही मार डाला जाए।

सुरंग बनाने वाले बड़े कारीगर को राक्षस ने खूब धन दिया था। वह बहुत-सा धन मिल जाने से बड़े ठाट-बाट से रहने लगा।

इधर चाणक्य के जासूसों को उसके ठाट-बाट देखकर सन्देह हुआ। वे उसका पीछा करने लगे।

सुरंग बनाने वाले सुरंग का काम लगभग पूरा कर चुके थे। वे सुरंग के भीतर ही रहते थे। वहीं खाते और वहीं सोते।

चाणक्य ने एक दिन देखा कि चन्द्रगुप्त के सोने के कमरे में चावल के दाने लिए चींटियों की कतार-की-कतार चल रही है। इससे उसे सन्देह हो गया कि दाल में काला है। उसने कमरे की दीवारों को ठोंक-पीटकर देखा तो एक जगह दीवार पोली जान पड़ी। अब चाणक्य ने कमरे में आग लगा दी। आग का धुआं सुरंग में भरा तो सारे

कारीगर दम घुटने से मर गए।

राक्षस के जासूस ने उसे बताया, चाणक्य ने चन्दनदास की सारी सम्पत्ति जब्त कर ली है और उसके परिवार को कैद कर लिया है। चन्दनदास पर यह आरोप लगाया गया है कि उसने राज्य के शत्रु राक्षस के परिवार को अपने घर रखा। चाणक्य ने चन्दनदास को बहुत डराया-धमकाया कि राक्षस के परिवार को राज्य-कर्मचारियों को सौंप दे, पर उसने सच्चे मित्र का कर्तव्य निभाते हुए प्राण देना स्वीकार कर लिया, पर आपके परिवार पर कोई आंच न आने दी।"

राक्षस को यह सब सुनकर बड़ा गहरा दुःख हुआ। उसे अपनी चालों के असफल होने और उनके द्वारा उल्टे अपने को ही हानि पहुंचने का दुःख तो था ही, इस बात का भी बड़ा दुःख था कि उसके मित्र सेठ चन्दनदास पर इसीलिए विपत्ति का पहाड़ टूट

गहनों की पोटली सुरक्षित रखने के लिए राक्षस को देते हुए सिद्धार्थक

पड़ा है कि उसने मेरे परिवार को अपने घर रखा और डराने-धमकाने पर भी मेरे परिवार को सौंपने और उसका पता-ठिकाना बताने से इनकार कर दिया।

राक्षस को अपने दूत से यह पता भी लग गया था कि जीवसिद्धि को चाणक्य ने अपमानित करके नगर से निकाल दिया है और शकटदास को सूली पर चढ़ाने का दण्ड दिया है।

राक्षस इन सब समाचारों को सुनकर चिन्ता में डूबा बैठा था कि इतने में शकटदास को लेकर सिद्धार्थक आ पहुंचा।

राक्षस तो समझे बैठा था कि शकटदास को सूली पर चढ़ा दिया गया है। उसे जीवित देखकर वह आश्चर्य और प्रसन्नता से उछल पड़ा।

तब सिद्धार्थक ने बताया, "मैं शकटदास को सूली चढ़ाने से पूर्व बलपूर्वक छुड़ा लाया हूं।"

मारे प्रसन्नता के राक्षस ने अपने गहने उतारकर सिद्धार्थक को दे दिए।

सिद्धार्थक ने गहने स्वीकार कर लिए। उसने कहा, "मेरे पास इन गहनों को सुरक्षित रखने के लिए कोई स्थान नहीं है। इसलिए आप ही कृपा करके इन्हें अपने पास रख छोड़िए। मुझे जब आवश्यकता पड़ेगी, तब ले लूंगा।"

सिद्धार्थक ने एक मुहर निकालकर दी और बोला, "इन गहनों की पोटली पर यह मुहर लगा दीजिए, जिससे यह विश्वास रहे कि गहने पूरे-के-पूरे हैं।"

राक्षस ने जब सिद्धार्थक की दी हुई मुहर देखी तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। यह तो उसकी अपने नाम की ही मुहर थी। राक्षस ने पूछा—"यह मुहर तुम्हें कहां से मिली ?"

सिद्धार्थक ने बताया कि सेठ चन्दनदास के घर के पास मिली थी।

राक्षस ने वह मुहर ले ली और गहनों की पोटली पर लगाकर अपने पास रख ली।

सिद्धार्थक ने कहा, "मुझे आप अपने पास ही रहने की अनुमति दे दीजिए।"

राक्षस ने उसकी बात स्वीकार कर ली।

उधर पाटलिपुत्र में राजा चन्द्रगुप्त ने कौमुदी-महोत्सव को धूमधाम से मनाने की घोषणा कर दी। लेकिन चाणक्य ने उसे रोकने की आज्ञा दे दी।

जब चन्द्रगुप्त को पता लगा कि मेरे घोषणा कर देने पर भी चाणक्य ने बिना मुझसे पूछे उत्सव का मनाना रुकवा दिया है तो उसने चाणक्य को दरबार में बुला भेजा।

चाणक्य के आने पर उसने पूछा, "आपने उत्सव क्यों रुकवाया ?"

चाणक्य ने रूखा-सा उत्तर दिया, "राज्य-व्यवस्था का काम मेरा है, इसलिए मैंने जो ठीक समझा, किया। तुम मुझसे पूछने वाले कौन हो ?"

यह उत्तर सुनकर राजा चन्द्रगुप्त को बड़ा क्रोध आया। उसे लगा कि मुख्यमंत्री मुझे कुछ नहीं समझता है और भरी सभा में मेरा अपमान कर रहा है।

इसी समय राक्षस के भेजे हुए भाटों ने ऐसी कविताएं पढ़ीं जिनका उद्देश्य ही चन्द्रगुप्त और चाणक्य में फूट डालना था। इन कविताओं में चन्द्रगुप्त की प्रशंसा की गई थी।

अपनी प्रशंसा से प्रसन्न होकर चन्द्रगुप्त ने दोनों भाटों को एक-एक लाख रुपया पुरस्कार देने को कहा।

किन्तु चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को रोक दिया। वह बोला, "यह राजकोष का अपव्यय है। सुपात्र को दिया हुआ दान ही श्रेष्ठ होता है, चापलूसों को दिया हुआ नहीं।"

इसपर चन्द्रगुप्त एकदम चिढ़ गया। वह बोला, "आप मेरी हर बात में रोड़ा अटकाते हैं। मैं राजा हूं और आप मंत्री, यह बात आपको नहीं भूलनी चाहिए। आप मुझे समझते क्या हैं? मेरा फैसला है कि आज से सारा राज-काज मैं स्वयं संभालूंगा।"

चाणक्य भला चन्द्रगुप्त की क्यों परवाह करता ! उसने कहा, "बहुत अच्छा। आज से मेरी छुट्टी हुई।"

चन्द्रगुप्त ने पूछा, "कौमुदी-महोत्सव क्यों रुकवाया ?"

चाणक्य ने बताया, "मलयकेतु अन्य सामन्तों के साथ मिलकर पाटलिपुत्र पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा है, इसलिए।" इस आशय का एक गुप्त पत्र भी चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को दिखाया।

चाणक्य की बुद्धिमत्ता पर चन्द्रगुप्त मुग्ध हो गया। उसने दूसरा प्रश्न किया, "अच्छा, यह बताइए कि यह मलयकेतु ही है जो हमारे विरुद्ध युद्ध की तैयारी कर रहा है, फिर आपने उसे भाग क्यों जाने दिया ? वह आपके चंगुल में था। आप चाहते तो उसे कैद नहीं कर सकते थे ?"

चाणक्य बोला, "इसका कारण भी बताता हूं। देखो, या तो हम उसे कैद रखते या फिर अपने वचन के अनुसार उसे आधा राज्य देते। अगर हम उसे कैद कर लेते तो लोग यही समझते कि आधा राज्य देने का वचन पूरा न करने के लिए हमने उसे कैद किया है और इसीलिए उसके पिता पर्वतक को भी हमने ही जहर देकर मरवाया है। इससे प्रजा हमारे ही विरुद्ध हो जाती।"

चन्द्रगुप्त ने कहा, "यह भी ठीक किया, किन्तु राक्षस को क्यों नहीं पकड़ा ?"

चाणक्य बोला, "राक्षस को प्रजा जी-जान से चाहती है। वह यदि यहां रहता तो हमारे विरुद्ध प्रजा को भड़काता। यदि हम उसे कैद करते तो भी विद्रोह हो जाता और व्यर्थ में सेना का नाश होता।"

चन्द्रगुप्त को चाणक्य की ये बातें अच्छी नहीं लगीं। वह दरबार से आकर महल में चला गया। वास्तव में चन्द्रगुप्त और चाणक्य का यह झगड़ा बिल्कुल बनावटी था।

एक दिन राक्षस और शकटदास बैठे कुछ बातचीत कर रहे थे कि पाटलिपुत्र से राक्षस का एक जासूस समाचार लेकर आया।

जासूस राक्षस को पाटलिपुत्र के समाचार सुना ही रहा था कि इतने में भागुरायण को साथ लेकर मलयकेतु राक्षस से मिलने आया।

राक्षस और जासूस की बातें मलयकेतु और भागुरायण सुनने लगे।

भीतर जासूस और राक्षस में बातें हो रही थीं। मलयकेतु और भागुरायण दरवाजे के पास रुक गए और भीतर की बातचीत सुनने लगे।

जासूस बता रहा था कि चन्द्रगुप्त और चाणक्य में झगड़ा हो गया है और राज्य का सारा काम-काज चन्द्रगुप्त ने स्वयं संभाल लिया है। यह सब सुनकर राक्षस खूब प्रसन्न हुआ।

जासूस ने झगड़े का कारण बताते हुए कहा कि चन्द्रगुप्त ने कौमुदी-महोत्सव मनाने की घोषणा की थी जिसे चाणक्य ने रुकवा दिया।

राक्षस ने कहा, "हां, अब हमारा काम बन गया।"

मलयकेतु ने भागुरायण से पूछा, "राक्षस कौन-सा काम बन जाने की बात कह रहा है?"

भागुरायण वास्तव में चाणक्य का जासूस था और वह मलयकेतु का भी मित्र बन गया था। उसने देखा कि मलयकेतु के मन में सन्देह पैदा करने का यह अच्छा अवसर है। वह बोला, "मंत्री राक्षस के मन की बात को समझ लेना सरल काम नहीं है। जरा चुपचाप खड़े होकर सुनते जाइए, आगे क्या बात होती है।"

भीतर राक्षस उस जासूस से पूछ रहा था, "चाणक्य सब-कुछ छोड़-छाड़कर तपोवन में तो नहीं चला गया? उसने कोई नई प्रतिज्ञा तो नहीं कर डाली?"

मलयकेतु ने फिर पूछा, "क्यों मित्र! इस बात को पूछने में राक्षस का क्या उद्देश्य है?"

भागुरायण न कहा, "उद्देश्य तो एकदम स्पष्ट है। चन्द्रगुप्त से चाणक्य जितना दूर चला जाएगा, उतना ही अधिक इस राक्षस का लाभ होगा। चन्द्रगुप्त शायद राक्षस को मंत्री बनाना चाहता हो और राक्षस भी चन्द्रगुप्त का मंत्री बनना चाहता हो।"

मलयकेतु को बात जंच गई। उसे लगा कि वह जिस राक्षस के भरोसे पाटलिपुत्र पर अधिकार करना चाहता है, वह राक्षस ही चन्द्रगुप्त से मिला हुआ है और मुझे धोखा दे रहा है। मलयकेतु के मन में भागुरायण ने राक्षस के प्रति जो सन्देह का बीज बोया था, वह बढ़ चला।

वे राक्षस के पास पहुंचे। राक्षस ने मलयकेतु को बताया, "अब हमारी जीत निश्चित है। शत्रु इस समय संकट में है। चाणक्य चन्द्रगुप्त से झगड़ा करके अलग बैठ गया है।"

इसपर मलयकेतु ने कहा, "मेरे विचार में तो इससे चन्द्रगुप्त को ही लाभ होगा, क्योंकि चाणक्य के कारण जो लोग चन्द्रगुप्त का साथ नहीं दे रहे थे, वे भी अब चन्द्र-

गुप्त का साथ देंगे।"

राक्षस ने इस बात को काटा। वह बोला, "चन्द्रगुप्त का साथ प्रजा उसी दिन तक देगी, जिस दिन तक उन्हें कोई दूसरा राजा नहीं मिलता। जब प्रजा जान लेगी कि आप उसे चन्द्रगुप्त के चंगुल से मुक्त करने के लिए तैयार हैं, उस दिन आपके साथ हो जाएगी।"

मलयकेतु ने राक्षस से भेंट तो की, पर दिल खोलकर बात नहीं की। चाणक्य के चन्द्रगुप्त से अलग होने की बात पर राक्षस जितनी प्रसन्नता प्रकट करता, उतना ही मलयकेतु का यह सन्देह बढ़ता जाता कि राक्षस चन्द्रगुप्त का मुख्यमंत्री बनना चाहता है और मेरे साथ छल कर रहा है।

एक बार जब कोई किसी पर सन्देह करने लगता है तो वह सन्देह बढ़ता ही जाता है। यद्यपि राक्षस ने ऐसा कोई कार्य नहीं किया था कि उसपर सन्देह किया जाए परन्तु चाणक्य के जासूस भागुरायण ने जान-बूझकर मलयकेतु के मन में राक्षस के प्रति सन्देह पैदा कर दिया था।

मलयकेतु ने सोचा—अब जल्दी ही पाटलिपुत्र पर आक्रमण करके चन्द्रगुप्त को हरा देना चाहिए। उसने राक्षस को आक्रमण की तैयारी करने के लिए कहा।

मुहूर्त निकलवाने के लिए जीवसिद्धि को बुलाया गया। उसने अशुभ मुहूर्त बता दिया। राक्षस ने दूसरे ज्योतिषी को बुला भेजा। जीवसिद्धि नाराज होकर चला गया।

मलयकेतु अपने सहायक सामन्तों के साथ सेना लेकर पाटलिपुत्र की ओर बढ़ चला। उसने पाटलिपुत्र से कुछ पहले ही छावनी डाल दी। वहां से चढ़ाई करने के लिए ठीक अवसर की प्रतीक्षा करने लगा।

छावनी के पास के मार्ग से पाटलिपुत्र को जानेवालों पर निगरानी रखी जाने लगी। बिना आज्ञापत्र के कोई नहीं जा सकता था।

सिद्धार्थक चाणक्य का दिया हुआ जाली पत्र और गहनों की सन्दूकची लिए पाटलिपुत्र की ओर जा रहा था कि मार्ग में जीवसिद्धि मिल गया। जीवसिद्धि बौद्ध भिक्षु के रूप में चाणक्य का जासूस था। सिद्धार्थक भी चाणक्य का ही जासूस था।

दोनों में बातें होने लगीं। जीवसिद्धि को जब पता लगा कि सिद्धार्थक पाटलिपुत्र जा रहा है तो उसने पूछा कि तुमने आज्ञापत्र ले लिया है या नहीं? यदि न लिया हो तो तुम आगे नहीं जा सकोगे।

आज्ञापत्र देने का यह काम सौंपा गया था भागुरायण को। भागुरायण और मलयकेतु एक ही स्थान पर बैठे हुए थे कि भिक्षु जीवसिद्धि अपना आज्ञापत्र लेने पहुंचा।

भागुरायण और मलयकेतु विचार-विमर्श करते हुए।

भागुरायण जानता ही था कि जीवसिद्धि भी चाणक्य का जासूस है और वह राक्षस से भी मेल-जोल रखता है।

उसने पूछा—भिक्षुक महाराज ! आप राक्षस के किस काम से पाटलिपुत्र जा रहे हैं ?

जीवसिद्धि—मुझे किसी राक्षस-वाक्षस से कोई मतलब नहीं।

भागुरायण—क्या राक्षस से कुछ मनमुटाव हो गया है ? लगता है, राक्षस से कोई भूल हो गई है।

जीवसिद्धि—अरे भई ! भूल तो हमीं से हुई है।

भागुरायण—पहेलियां मत बुझाओ, स्पष्ट बताओ क्या बात है ?

जीवसिद्धि—क्या बात बताऊं ! मैं जब पाटलिपुत्र में रहता था तो राक्षस ने मेरे हाथों जहर दिलवाकर राजा पर्वतक की हत्या करवाई। वह नीच कार्य मुझे ही करना पड़ा।

यह सुनकर पास बैठे मलयकेतु की आंखें भर आईं। उसे पूरा विश्वास हो गया कि उसके पिता का हत्यारा राक्षस ही है।

मलयकेतु के क्रोध को शान्त करते हुए भागुरायण ने कहा, "इस समय राक्षस से बिगाड़ करना ठीक नहीं है। जब अपना काम निकल जाएगा, तब राक्षस से निबट लेंगे। हमें पहले पाटलिपुत्र का राज्य प्राप्त कर लेना चाहिए।"

मलयकेतु ने उसकी बात मान ली।

इसी समय एक राजकर्मचारी बिना आज्ञापत्र के जाते हुए सिद्धार्थक को पकड़कर भागुरायण के पास ले आया।

जब उससे पूछा कि तुम बिना आज्ञापत्र के क्यों जा रहे थे, तो उसने कहा कि राक्षस के जरूरी काम से जा रहा था। जल्दी के कारण आज्ञापत्र नहीं ले सका।

सिद्धार्थक की तलाशी लेने पर एक पत्र मिला। भागुरायण ने पत्र को ध्यान से देखा तो उसपर राक्षस की मुहर लगी हुई थी। उसने पत्र मलयकेतु के हाथ में थमाते हुए कहा, "क्योंकि इस पत्र पर राक्षस की मुहर है, इसलिए आप ही इस पत्र को खोलकर पढ़ सकते हैं।"

मलयकेतु ने वह पत्र खोलकर पढ़ा। उसमें लिखा था—'आपका पत्र मिला। भेजे हुए गहने भी मिले। गुप्तचरों को जो कुछ देने का वचन दिया है, उसे पूरा करें। शेष बात हमारा पत्रवाहक आपको बताएगा।'

भागुरायण ने सिद्धार्थक से पूछा, "तुम्हें जबानी क्या बताने के लिए कहा है?"

सिद्धार्थक आनाकानी करने लगा तो भागुरायण के कहने से उसकी पिटाई की गई। पिटाई करते समय सिद्धार्थक की बगल में छिपाए हुए गहने गिर पड़े।

भागुरायण ने गहने उठाकर मलयकेतु को दे दिए। गहनों की पोटली पर भी राक्षस की मुहर थी।

मुहर तोड़कर गहने देखे तो मलयकेतु ने झट पहचान लिया कि ये तो वही गहने हैं जो मैंने राक्षस के लिए भेजे थे।

सिद्धार्थक से और बातें उगलवाने के लिए उसे दो बार पीटा गया।

तब उसने बताया, "मैं यह पत्र चन्द्रगुप्त के पास ले जा रहा था। मन्त्री राक्षस ने चन्द्रगुप्त को सन्देश भेजा था कि कुल्लू का राजा चित्रवर्मा, मलय का राजा सिंहनाद, कश्मीर का राजा पुष्कराक्ष, सिन्धु का राजा सिन्धुसेन और पारस का राजा मेघाक्ष, ये हमारे पांचों मित्र आपको बहुत चाहते हैं। जैसे आपने चाणक्य को निकालकर मेरे प्रति अपना प्रेम प्रकट किया है, वैसे ही इन छोटे राजाओं पर प्रेम दिखाने की कृपा करें।"

ये बातें सुनकर मलयकेतु के पांवों के नीचे की जमीन सरक गई।

उसने उसी समय राक्षस को बुला भेजा।

राक्षस ख़रीदे हुए गहनों में से एक हार पहनकर मलयकेतु से मिलने चला।

जब राक्षस आ गया तो मलयकेतु ने पूछा, "पाटलिपुत्र पर चढ़ाई करने में अभी कितना समय लगेगा ?"

राक्षस ने उत्तर दिया, "पांच-छः दिन में हम लोग वहां पहुंच जाएंगे।"

इतने में मलयकेतु ने सिद्धार्थक को बुला लिया और राक्षस से पूछा, "इस आदमी को आपने पत्र देकर कहां भेजा था ?"

सिद्धार्थक ने लज्जा से सिर झुकाते हुए रोनी सूरत बनाकर राक्षस से कहा, "मन्त्री जी ! इन लोगों ने मुझे बहुत पीटा। इसलिए मुझे सारी बातें बतानी पड़ीं।"

बेचारे राक्षस की समझ में कुछ नहीं आया कि क्या मामला है। मलयकेतु ने सिद्धार्थक से लिया हुआ पत्र राक्षस को दिखाया।

पत्र पढ़कर राक्षस ने कहा, "यह सब शत्रु की चाल है। मैंने न तो कोई पत्र दिया और न ही किसीके पास इसे भेजा।"

इसपर मलयकेतु बोला, "किन्तु ये गहने भी तो आपने भेजे हैं। ये वही गहने हैं जो मैंने आपके लिए भेजे थे।"

गहने देखकर राक्षस ने कहा, "ये गहने मैंने एक बार प्रसन्न होकर सिद्धार्थक को दिए थे।"

जब यह छानबीन हुई कि पत्र किसके हाथ का लिखा हुआ है तो पता चला कि वह राक्षस के अपने आदमी शकटदास का लिखा हुआ है।

इतने में कुमार मलयकेतु की दृष्टि राक्षस के गले में पहने हार पर पड़ी। उसने झट पहचान लिया कि यह हार तो मेरे स्वर्गीय पिता पर्वतक का है। मलयकेतु ने राक्षस से पूछा, "यह कण्ठहार आपको कहां से मिला ?"

राक्षस ने उत्तर दिया, "एक जौहरी से खरीदा था।"

कुमार मलयकेतु ने कहा, "यह हार तो मेरे स्वर्गीय पिताजी का है।" उसने राजा पर्वतक की दासी को बुलाकर वह कण्ठहार दिखाया तो उसने भी झट पहचान लिया।

चाणक्य के इस फैलाए जाल में राक्षस पूरी तरह फंस चुका था। राक्षस को अब पता लगा कि वह चाणक्य की छल-नीति का शिकार हो गया है। उसने समझ लिया कि इस समय सफाई देना व्यर्थ है। कूटनीति की इस शतरंज में वह चाणक्य से हार चुका था। उसने माथे पर हाथ मारते हुए केवल इतना कहा, "यह सब भाग्य का खेल है।"

मलयकेतु की दृष्टि में राक्षस अत्यन्त नीच और धोखेबाज सिद्ध हो चुका था। उसे झूठी बातों और प्रमाणों से पक्का विश्वास हो गया था कि मेरे पिता को चाणक्य ने नहीं, राक्षस ने मरवाया है और अब वह मुझे भी मरवाना चाहता है। राक्षस चन्द्रगुप्त से मिला हुआ है और उसका मुख्यमंत्री बनना चाहता है।

राक्षस ने मलयकेतु को अपनी सचाई का विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया, पर मलयकेतु ने उसकी बात का विश्वास नहीं किया। उसने राक्षस के मुंह पर कह दिया, "तुम्हीं मेरे पिता के हत्यारे हो ! तुम शत्रु से मिले हुए हो और मुझे मरवाना चाहते हो। तुमने मेरे साथ विश्वासघात किया है।" यों राक्षस को खरी-खोटी सुनाता हुआ मलयकेतु वहां से चला गया।

इधर राक्षस सोचने लगा—'मेरे सारे पांसे उल्टे ही पड़ते रहे। चाणक्य के जासूस मेरे मित्र बनकर मुझे छलते रहे और मैं उन्हें पहचान नहीं सका। जो जाल मैंने शत्रुओं को फंसाने के लिए फैलाया था, उसमें मेरे ही मित्र फंस गए। सबसे अधिक दुःख इस बात का है कि मलयकेतु ने मुझे विश्वासघातक समझा। चाणक्य की कूटनीति की वह मन-ही-मन प्रशंसा करने लगा। उसे लगा कि पराजित और अपमानित होकर जीना बेकार है। अपनों के बीच अपमानित जीवन बिताने की अपेक्षा उसने तपोवन में चले जाना अच्छा समझा। पर तभी उसे ध्यान आया कि मेरा मित्र चन्दनदास मेरे लिए, एक मित्र के लिए कैद का दुःख भोग रहा है। उसे इस विपत्ति से छुड़ाना मेरा सबसे पहला कर्तव्य है। मुझे बचाने के लिए ही तो वह फंसा है ! अब यदि मैं चाणक्य के सामने आत्म-समर्पण कर देता हूं तो वह मेरे मित्र चन्दनदास को छोड़ देगा।

यही सब सोचता हुआ वहां से वह पाटलिपुत्र की ओर चल पड़ा।

उधर मलयकेतु को जब यह पता चला कि मेरे अधीनस्थ राजा, जो मेरी सहायता के लिए आए हुए हैं, मुझे धोखा दे रहे हैं और चन्द्रगुप्त से मिले हुए हैं तो उसने अपने सेनापति भासुरक को आज्ञा दी कि जो राजा लोग हमारे साथ विश्वासघात करने पर तुले हुए हैं, उन्हें मार डाला जाए।

सेनापति ने कुछ को मार डाला, कुछ भाग गए। अब मलयकेतु अकेला रह गया।

चाणक्य को अपने जासूसों द्वारा राक्षस और मलयकेतु के सारे समाचार मिलते रहते थे। अब अपने अनुकूल अवसर देखकर चाणक्य के सैनिकों ने मलयकेतु को कैद कर लिया और उसकी सेना को मार भगाया।

राक्षस बाजी हार चुका था। उसके सारे किए-धरे पर पानी फिर गया था। वह बहुत दुःखी था। वह चलते-चलते पाटलिपुत्र नगर के बाहर एक बगीचे में पहुंच गया था और बैठा सुस्ता रहा था। राक्षस उदास, निराश और थका हुआ अपने भाग्य को कोस रहा था।

इसी समय एक व्यक्ति हाथ में फांसी का फंदा लिए वहां आया। वह अकेला बड़-बड़ा रहा था—अब जीना बेकार है। मौत ही मुझे इस दुःख से छुटकारा दिला सकती है। मैं मित्र के वियोग को सहन नहीं कर सकता।

इन शब्दों को सुनकर राक्षस लताकुंज से बाहर निकल आया। वह आदमी अपने गले में फंदा लगाने ही वाला था। राक्षस ने उसे रोकते हुए कहा, "अरे भई, यह क्या कर रहे हो ?"

वह बोला, "पथिक ! मैं बहुत दुःखी हूं। मुझे अपनी मौत मरने दो। मुझे रोको मत !"

यह सुनकर राक्षस की जिज्ञासा और बढ़ गई। राक्षस के बहुत आग्रह करने पर उस आदमी ने बताया, "सेठ चन्दनदास का एक मित्र विष्णुदास अपने मित्र चन्दनदास के दुःख से दुःखी होकर अग्नि में जलकर मरने जा रहा है। यह विष्णुदास मेरा बड़ा गहरा मित्र है उसके वियोग में मैं भी जीना नहीं चाहता।"

राक्षस ने पूछा, "पर चन्दनदास को ऐसा क्या दुःख है जिससे दुःखी होकर उसका मित्र विष्णुदास अपने प्राण गंवाना चाहता है ?"

उस आदमी ने बताया, " क्योंकि चन्दनदास ने चाणक्य के शत्रु अपने एक मित्र राक्षस के परिवार को अपने घर में आश्रय दिया था और बाद में चाणक्य के दबाव डालने पर भी राक्षस के परिवार को राजकर्मचारियों के हवाले नहीं किया, इसीसे क्रुद्ध होकर चाणक्य ने चन्दनदास को कैद कर लिया और अब उसे सूली पर चढ़ाया जा रहा है। चन्दनदास के सूली चढ़ाए जाने से दुःखी होकर विष्णुदास आग में जल मरना चाहता है और मित्र विष्णुदास के जल मरने से दुःखी होकर मैं आत्महत्या कर रहा हूं।"

राक्षस ने उस आदमी को आश्वासन देते हुए कहा, "मित्र, घबराओ मत ! चन्दनदास की रक्षा मैं करूंगा।" यह कहते हुए उसने अपनी तलवार संभाली और उस ओर चल पड़ा, जहां चन्दनदास को सूली पर चढ़ाया जाने वाला था।

उस व्यक्ति ने कहा, "यह आप क्या अनर्थ कर रहे हैं ? जिस जगह किसीको सूली चढ़ाया जाता है, वहां हथियार लेकर कोई नहीं जा सकता। संभवतः आपको पता नहीं है कि जब से शकटदास वध-स्थल से भाग निकला है, तब से वहां पर हथियार-

बन्द लोगों के आने-जाने पर चाणक्य ने पाबन्दी लगा दी है। और यदि वधिकों को जरा भी सन्देह हो गया कि चन्दनदास को छुड़ाने के लिए कोई आ रहा है तो वे और भी जल्दी से उसे सूली पर चढ़ा देंगे।"

राक्षस भी चक्कर में पड़ गया कि अब क्या किया जाए। अन्त में उसने तलवार तो वहीं फेंक दी और निहत्था ही वध-स्थल की ओर चल पड़ा। उसने सोचा कि मैं जब राज-कर्मचारियों के सामने आत्म-समर्पण कर दूंगा तो वे चन्दनदास को छोड़ देंगे।

चाण्डाल चन्दनदास को सूली पर चढ़ाने के लिए ले चले। चन्दनदास की पत्नी, पुत्र और मित्र रोते-बिलखते पीछे-पीछे चल रहे थे। वध-स्थल के पास पहुंचकर चांडालों ने लोगों को आगे बढ़ने से रोक दिया। चन्दनदास की पत्नी छाती पीट-पीटकर रोने लगी। चन्दनदास उसे धीरज बंधाने का प्रयत्न करने लगा और घर लौट जाने के लिए कहने लगा। पर पति को सूली पर चढ़ते देखकर भला कौन स्त्री धीरज रख सकती है? वह करुण विलाप करती हुई बिलख-बिलखकर रोती रही।

इतने में सबने देखा कि कुछ ही दूर हाथ उठाकर चन्दनदास को पुकारता हुआ राक्षस चला आ रहा है। वह जोर-जोर से चिल्ला रहा था, "मित्र चन्दनदास! निश्चिन्त रहो, मैं आ गया हूं।"

मित्र राक्षस का जाना-पहचाना स्वर सुनकर चन्दनदास अवाक् रह गया। वह बोला, "मित्र, यह तुमने क्या किया? तुमने तो सारे किए-धरे पर पानी फेर दिया!"

राक्षस ने राज-कर्मचारियों से कहा, "आप चन्दनदास को छोड़ दीजिए और मुझे सूली पर चढ़ाइए।"

एक चाण्डाल बोला, "अजी, आप यहां से हट जाइए। हमें अपना काम करने दीजिए। देर हो रही है। मुख्यमंत्री चाणक्य को पता लगा तो वे हमें दण्ड देंगे। सेठ चन्दनदास को कोई नहीं बचा सकता। बचा सकता है तो केवल राक्षस।"

राक्षस ने कहा, "मैं ही तो राक्षस हूं! आप मंत्री चाणक्य को सूचना दीजिए कि राक्षस ने आत्म-समर्पण कर दिया है। वह चन्दनदास को छुड़ाने के लिए सूली चढ़ने के लिए तैयार है।"

इसी समय चन्द्रगुप्त के साथ चाणक्य वहां आ पहुंचा। वह तो वध-स्थल के पास

ही छिपा बैठा था। सारी बातें उसकी बनाई योजना के अनुसार ही हो रही थीं।

चाणक्य ने आते ही राक्षस के चरण छूकर प्रणाम किया। यह देखकर सभी लोग आश्चर्य-चकित रह गए।

राक्षस ने कहा, "अरे-रे ! यह आप क्या कर रहे हैं ? मेरा स्पर्श मत कीजिए। मैं चाण्डालों से छू गया हूं और अपवित्र हूं।"

चाणक्य ने कहा, "यहां चाण्डाल कौन है ? यह जो सामने खड़ा है, यह आपका परिचित सिद्धार्थक है, और वह दूसरा है समिद्धार्थक। ये मेरे जासूस हैं जो चाण्डाल का भेस बनाए हुए हैं। बगीचे में फांसी लगाने की तैयारी करता जो आदमी आपको मिला था, वह भी मेरा जासूस ही था। वह नकली चिट्ठी और वे गहने मेरी ही छल-नीति का कमाल था। वह सब मुझे इसलिए करना पड़ा कि आपका और चन्द्रगुप्त का मेल हो सके। आप नन्दवंश के पुराने मंत्री हैं। चन्द्रगुप्त भी उसी वंश का है। आपकी स्वामि-भक्ति अद्‌भुत है।" यह कहते हुए चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को, राक्षस को प्रणाम करने के लिए कहा। चन्द्रगुप्त ने राक्षस के चरण छूकर प्रणाम किया।

अब चाणक्य ने राक्षस से कहा, "आप सेठ चन्दनदास की प्राण-रक्षा चाहते हैं तो मुख्यमंत्री-पद की प्रतीक इस तलवार को ग्रहण कीजिए !"

यह सुनकर राक्षस बोला, "आपके होते मेरे तलवार ग्रहण करने का प्रश्न ही नहीं उठता। आपके सामने मैं क्या चीज हूं !"

चाणक्य ने कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं ? इन बातों में क्या रखा है ! यदि आप चन्दनदास की प्राण-रक्षा करना चाहते हैं तो मुख्यमंत्री-पद आपको स्वीकार करना ही पड़ेगा।"

अब तो राक्षस विवश हो गया। उसने तलवार ग्रहण करना स्वीकार कर लिया।

राक्षस के तलवार ग्रहण करने पर चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को बधाई दी और कहा, "अब तुम्हारा राज्य सुदृढ़ हो गया। राक्षस द्वारा मुख्यमंत्री का पद ग्रहण करना राज्यश्री को बढ़ाएगा।"

इसी समय सैनिक मलयकेतु को बांधकर ले आए और चाणक्य से पूछने लगे कि इनके लिए क्या आज्ञा है।

चाणक्य ने कहा, "अब मैं आज्ञा देने वाला कौन हूं ? नये मुख्यमंत्री से पूछो !"

राक्षस ने कहा, "महाराज चन्द्रगुप्त ! कुमार मलयकेतु से मेरा मैत्री सम्बन्ध है,

राक्षस का अभिनन्दन करते हुए चाणक्य

इसलिए इनको प्राणदण्ड न दिया जाए।"

यह सुनकर महाराज चन्द्रगुप्त चाणक्य की ओर देखने लगे।

चाणक्य ने कहा, "राजन्! मुख्यमंत्री की पहली आज्ञा का सम्मान होना ही चाहिए। सैनिको! भद्रभट से कह दो, महाराज चन्द्रगुप्त ने कुमार मलयकेतु को बन्धन-मुक्त करने और इनका पैतृक राज्य इन्हें लौटाने की आज्ञा दी है।"

फिर चाणक्य ने चन्द्रगुप्त की ओर देखकर कहा, "आज राक्षस ने आपके मुख्य-मंत्री का पद ग्रहण किया है, इस उपलक्ष्य में चन्दनदास को 'नगरसेठ' की उपाधि प्रदान की जाए।" फिर सैनिक से कहा, "दुर्गरक्षक विजयपाल से जाकर कह दो कि हाथियों, घोड़ों और कैदियों के बन्धन खोल दिए जाएं। राक्षस के मुख्यमंत्री बन जाने पर अब सेना की कोई आवश्यकता नहीं है।"

सभी उपस्थित लोग चाणक्य और चन्द्रगुप्त का जयजयकार करने लगे।

इस प्रसन्नता के अवसर पर अन्त में चाणक्य ने कहा, "सबके बन्धन कट गए, किन्तु अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार मैं अपनी शिखा का बन्धन बांधता हूं।"

इस प्रकार चाणक्य ने अपने बुद्धिबल से अपनी कठिन प्रतिज्ञा को पूरा किया।

□□

22901